रमज़ान शरीफ़ उसके रोज़े और ईद से मुतअल्लिक़ कुछ
ज़रूरी अहकामे शरअ जानने के लिए एक मुख़्तसर रिसाला

बनाम

रमज़ान का तोहफ़ा

मौलाना तत्हीर अहमद रज़वी बरेलवी

इस्लामी कुतुबख़ाना
क़स्बा धौंरा, बरेली (उ० प्र०)
9319295813, 8899240400

Rs. 40.00



سواد اعظم اہلِ سنت و جماعت

یارسول اللہ ﷺ

(مسلک اعلیٰ حضرت زندہ باد)

A Huge Collection of Islamic Books

https://t.me/maktabefikreraza

مکتبِ فکر رضا

زمین و زماں تمہارے لیے مکین و مکاں تمہارے لیے

چنین و چناں تمہارے لیے بنے دو جہاں تمہارے لیے

دہن میں ہے زباں تمہارے لیے بدن میں ہے جاں تمہارے لیے

ہم آئے یہاں تمہارے لیے اٹھے بھی وہاں تمہارے لیے

از: امام اہل سنت، امام احمد رضا قادری برکاتی محدث بریلوی رحمۃ اللہ علیہ

بسم الله الرحمن الرحيم

रमज़ान शरीफ़ उसके राज़े और ईद से मुतअल्लिक़ कुछ ज़रूरी अहकामे शरअ जानने के लिए एक मुख़्तसर रिसाला

बनाम

रमज़ान का तोहफ़ा

मुरत्तिब

(मौलाना) ततहीर अहमद रज़वी बरेलवी

नाशिर

इस्लामी कुतुबख़ाना

क़स्बा धौंरा, ज़िला बरेली शरीफ़, यू.पी.

पिन-243204

मोबाइल 9319295813 फोन 0581-3252466

بسم الله الرحمن الرحيم

सारी तारीफ़ें खूबियाँ और बुलन्दियाँ **अल्लाह** के लिये है। जो सारे जहानों का रब है उसके अलावा कोई इबादत, पूजा और परस्तिश के लायक नहीं वह सबको देता है किसी से कुछ लेता नहीं सब उसके मोहताज हैं और सबको उसकी ज़रूरत है उसे न किसी की ज़रूरत न वह किसी का मोहताज सबके लिये मौत व फ़ना है उसके लिय मौत व फ़ना नहीं वह हमेशा से है हमेशा रहेगा।

करोड़ों दुरूद व सलाम और अल्लाह की रहमतें नाज़िल हों उनपर जो सारे जहानों के लिये रहमत बनकर तशरीफ़ लाये वह नबियों और रसूलों के सरदार हैं वह **मोहम्मद** मुस्तफ़ा हैं जिनके ज़िक्र से ज़मीन और आसमान भरे हुये हैं और उनके चर्चे हर कान तक पहुँचे हुये हैं उनकी आल व औलाद सहाबियों और साथियों पर जो खुदाई फौजों के सिप-ए-सलार हैं। और हर इस्लामी गिरोह के सरदार हैं।

रमज़ान के रोज़े कब फ़र्ज़ हुये

मदीने शरीफ़ में हिजरत के दूसरे साल शाबान के महीने में रमज़ान के रोज़े फ़र्ज़ किये गये।

मालूमात में इज़ाफ़े के लिये हमने यह बात लिख दी वैसे आम लोगों को इन बातों में ज़्यादा दिलचस्पी नहीं लेना चाहिये कि कब क्या हुआ और क्यों हुआ और कैसे हुआ एक मुसलमान के लिये इतना जान लेना काफी है कि उसके लिये क्या जाइज़ है और क्या ना जाइज़ क्या हराम है और क्या हलाल क्या ज़रूरी है और क्या ग़ैर ज़रूरी या कम ज़रूरी।

जो लोग नमाज़ रोज़े वगैरह के दीनी इस्लामी मसाइल हराम और हलाल जाइज़ और ना जाइज़ से तो दिलचस्पी नहीं रखते और न ही उन्हे सीखने की कोशिश करते हैं हर वक़्त इसी खोजबीन तलाश व जुस्तजू और पूछताछ में लगे रहते हैं कि यह कब हुआ? वह कब हुआ? यह क्यों हुआ? वह क्यों हुआ? यह कैसे हुआ? और वह कैसे हुआ? ऐसे लोग अक्सर गुमराह हो जाते हैं गुमराह व बद दीन आदमी की यह भी एक पहचान है कि वह दीनी इस्लामी एहकाम व मसाइल से दिलचस्पी न रखता हो तारीखी बातों और क्या? क्यों? कैसे? में हर वक़्त लगा रहता हो। करता कुछ न हो और पूछता ज़्यादा हो इस्लामी मसाइल के मामले में कुरेद और बारीकियों में जाने से भी आम लोगों को बचना चाहिये

रमज़ान के रोज़ों की अहमियत

रमज़ान के रोज़े इस्लाम की पाँच बुनियादों में से एक बुनियाद और सबसे ज़्यादा अहम व ज़रूरी अहकाम में से एक हुक्म है जान बूझकर रमज़ान के रोज़े न रखने वाला सही मआ़ना में मुसलमान नहीं है सिर्फ एक रोज़ा रखकर बे वजह तोड़ देने की दुनिया में सज़ा बदला जिसे कफ़्फ़ारा कहते हैं वह यह है कि एक गुलाम आज़ाद करे या फिर साठ रोज़े लगातार रखे या फिर साठ मिसकीनों को दोनो वक़्त का खाना खिलाये और तोबा करे कुरआ़न करीम में जगह जगह और सैकड़ो हदीसों में रमज़ान के रोज़ों का ज़िक्र मौजूद है अगर कोई शख़्स रमज़ान का सिर्फ़ एक रोज़ा जानबूझकर छोड़ दे और साल के 330 दिन रोज़े रखे तो वह इसका बदला नहीं हो सकते जिसके फ़राइज़ पूरे न हों उसका कोई नफ़िल कबूल नहीं है

रमज़ान में रोज़े न रखना तो बहुत बड़ा गुनाह है और सख़्त हराम है लेकिन उनकी फ़र्ज़ियत का इनकार करना यानि यह कहना

कि यह कोई ज़रूरी काम नहीं है कुफ्र है और यह कहने वाला काफ़िर हो जाता है। ऐसे ही रोज़ों की या रोज़ेदारों की रोज़े की वजह से हंसी उड़ाने मज़ाक बनाने वाला भी मुसलमान नहीं रहता जैसे कुछ लोग कह देते हैं कि रोज़ा वह रखे जिसके घर खाने को न हो ऐसा कहने वाला इस्लाम से ख़ारिज हो जाता है ऐसे ही यह मिसाल देना कि नमाज़ पढ़ने गये थे रोज़े गले पड़ गये यह भी कल्मा-ए-कुर्फ है।

रोजे की हिकमतें

रोज़े में दीनी उख़रवी फ़ायदों के साथ दुनियवी फायदे भी बहुत ज़्यादा हैं ग़ैर मुस्लिम दानिश मन्दों ने भी इस्लामी रोज़ों की तारीफ़ की है रोज़े रखने से भूखे प्यासे रहने की और भूख प्यास को बर्दाश्त करने की आदत पड़ती है और यह इन्सानी ज़िन्दगी के लिये ज़रूरी है रोज़े रखने से खाने पीने की कद्र व कीमत मालूम होती है सही बात यह है कि भरे पेट पर उम्दा ग़िज़ाएं वह लज़्ज़त नहीं देतीं जो भूखे और खाली पेट वाले को घटिया क़िस्म की ग़िज़ाओं में हासिल होती है एक ग़रीब रोज़ेदार को दिनभर रोज़ा रखकर शाम को एक गिलास पानी सादा सालन और रोटी के दो लुक्मों में जो मज़ा आता है वह अमीरों रईसों नवाबों बादशाहों को सैकड़ों तरह के खाने सजे दस्तरख़्वानों पर नहीं आता है और यह अल्लाह का फ़ज़ल है वह जिस पर चाहता है फरमाता है।

एक बुजुर्ग से मनकूल है कि जब वह खाना खाते तो यह कहते या अल्लाह तेरा शुक्र है तूने भूख अता फ़रमाई मुरीदों ने अर्ज़ किया कि भूख का शुक्र करते हैं खाने का शुक्र नहीं करते तो फ़रमाया अगर भूख न होती तो खाने में मज़ा न आता।

रोज़ा रखने से इन्सान भूखा रहता है और उसे भूख और प्यास की परेशानी महसूस होती है तो भूखे लोगों को खिलाने का

जज़्बा पैदा होता है रोज़ा रखने में डाक्टरी और तिब्बी फ़ायदे भी बहुत ज़्यादा हैं रोज़े और उनकी भूख बहुत सी बीमारियों को खत्म करती है जिस्म को साफ़ करती और निखारती है पेट की गन्दगी आलाइशों बीमारी के कीड़ों और जरासीम को जलाती है लेकिन सहरी व इफ़तार के वक़्त ठूंसकर खाना खाने वाले या रात में बार बार खाने वाले रोज़े के तिब्बी और जिस्मानी फ़ायदे पूरे तौर पर नहीं पाते।

ग्यारह महीने काम एक माह आराम

यह एक मशवरह है कोई शरअई हुक्म नहीं क्योकि बहुत से लोग रमज़ान में कामधाम की वजह से या तो रोज़ा रख ही नहीं पाते या रखते हैं तो उन पर बहुत भारी पड़ता है इस लिये उलमा नें फ़रमाया है कि रमज़ान में उतना ही काम करे जो रोज़ा रखकर आसानी से कर सके लिहाज़ा ग्यारह महीने काम करे कमाये और हो सके तो रमज़ान में आराम और इतमिनान से रोज़े रखें और इस माहे मुबारक को इबादत व तिलावत में गुज़ारें।

आजकल अक्सर लोग जो काम धंधे के लिये पागल से बने घूम रहे हैं यह पेट की दो रोटी और तन के दो कपड़ों के लिये नहीं बल्कि इन्होने अपने शौक अरमान और खर्चे बढ़ा लिये हैं उनकी पूर्ति के लिये इन्हें रात दिन फुरस्त नही है आजकल ब्याह शादी रस्मो रिवाज खाने पीने ओढ़ने बिछोने घर मकान बनाने के कितने खर्चे तो वह हैं जो आदमी जरूरत की वजह से नही बल्कि शान शेखी दिखाने या यारो दोस्तों के कहने सुन्ने की वजह से करता है कि ऐसा नहीं करूंगा तो लोग क्या कहेंगे यह नहीं होगा तो क्या कहेंगे यह सब बड़े बेवकूफ़ होते है कि जो दूसरों के कहने में आकर या उनको दिखाने के लिये अपने आप को बर्बाद कर लेते हैं।

बहरहाल हमारा मशवरह हमारे भाईयों के लियें यही है कि

ग्यारह महीने कमायें और रमज़ान का महीना नमाज़ और ज़िक्र शुक्र में गुज़ारें रमज़ान में जहाँ तक मुमकिन हो सफ़र से भी बचें।

और जो शख़्स रमज़ान में रोज़ा रखने वाले नौकर नौकरानियों या कोई अफ़सर अपने मातहत रोज़ेदार मुलाज़मीन के साथ नर्मी और आसानी का बर्ताव करे उनसे कम से कम काम ले या अल्लाह तौफ़ीक वुसअ़त और हिम्मत दे तो बे काम के तनख्वाह और उजरत दे दे तो ऐसा शख्स बड़े अजर का मुस्तहक है और साहिबे ईमान हो तो यक़ीनन वह जन्नत का हक़दार है और उम्मीद है कि दुनिया में भी अल्लाह तआ़ला उसको बहुत नवाज़ेगा।

रोज़ा किसे कहते हैं ?

पिछली उम्मतों में रोज़े रखने की मुख़्तलिफ़ शक्लें और सूरतें रही हैं लेकिन शरिअ़ते मोहम्मदी में रोज़ा दिन में सुबह सादिक से लेकर सूरज डूबने के वक़्त तक खाने पीने पेट या दिमाग़ में कोई ग़िज़ा या दवा दाखिल करने सोहबत यानि हमबिस्तरी से खुद को रोकने का नाम है रोज़े में अल्लाह की इबादत की नियत करना भी ज़रूरी है यानि दिल से यह ख्याल करना कि मेरा यह भूखा प्यासा रहना अल्लाह तआला की इबादत और उसको राज़ी करने के लिये है।

अगर कोई शख़्स पूरे एक दिन एक रात बेहोश या सोता रहा या उसको मजबूरन दिन में भूखा प्यासा रहना पड़ा कोई चीज़ खाने पीने की मिल न सकी या किसी ने हाथ पाँव बांधकर डाल दिया और बर बिनाये मजबूरी कुछ खा पी ना सका तो यह पेट में कुछ न जाना भूखा प्यासा रहना रोज़ा नहीं कहलायेगा क्योंकि दिल में रोज़े और इबादत की नियत नहीं है।

यहाँ यह भी जान लेना ज़रूरी है कि नियत नमाज़ की हो या रोज़े की वह दिल के इरादे का नाम है ज़बान से कहना ज़रूरी नहीं

है ज़बान से कुछ भी न कहे सिर्फ दिल से इरादा कर ले कि मैं यह काम खुदा की इबादत और रज़ा के लिये कर रहा हूँ तो काफी है इसी को नियत कहते हैं नमाज़ या रोज़े की नियत के जो अल्फ़ाज़ व कलमात राइज हैं यह सब हुजूर आपके सहाबा व ताबिईन के ज़माने के बाद राइज हुये हैं और सिर्फ मुस्तहब और अच्छे हैं ज़रूरी नहीं है आजकल कुछ लोग जबान से अदा किये जाने वाले नियत के अल्फ़ाज़ को फर्ज़ व वाजिब और ज़रूरी सा समझने लगे हैं और किसी लफ़्ज़ में कोई मामूली उलटफेर या तबदीली आ जाये तो तूफान खड़ा कर देते हैं यह सब अनपढ़ और ना समझ लोग होते हैं यह नहीं जानते कि मामूली अल्फ़ाज़ की तबदीली या उलटफेर तो अपनी जगह नमाज़ रोज़े वगैराह की नियत में अगर ज़बान से बिल्कुल कुछ न कहे तब भी कोई हर्ज नहीं है हाँ जो लोग ज़बान से नियत के अल्फ़ाज़ अदा करने के बिल्कुल काइल ही नहीं इसे ना जाइज़ हराम व बिदअ़त कहते हैं वह भी जिहालत में मुब्तिला हैं ज़बान से नियत के अल्फ़ाज़ अदा करना ज़माना-ए-रिसालत मआब में अगरचिह राइज न हो लेकिन साबित जरूर है इनको समझाने के लिये हम सिर्फ एक कुरआन की आयत और कुछ आहदीसे रसूल लिख देते हैं (सल्लल्लाहो अलैह वसल्ल) कुरआन करीम में है।

قُلْ اِنَّ صَلَاتِیْ وَنُسُكِیْ وَمَحْيَایَ وَمَمَاتِیْ لِلّٰهِ رَبِّ الْعَالَمِيْنَ

तुम (ज़बान से) कहो कि मेरी नमाज़ और हर किस्म की इबादतें और मेरा मरना मेरा जीना सब अल्लाह के लिये हैं जो सारे जहानों का रब है। (पारा नं. 8 रूकूअ नं0 7)

यानि जो काम अल्लाह की रज़ा और उसकी इबादत के तौर पर किया जाये उसका इज़हार ज़बान से भी किया जा सकता है कि हम यह काम अल्लाह के लिये कर रहे हैं।

हदीसे पाक में है कि एक सहाबी-ए-रसूल हज़रत सय्यदना

सअ़द बिन उबादह रज़ि अल्लाह तआ़ला अन्हो की माँ का इन्तिक़ाल हुआ तो उन्होने हुज़ूर सल्लल्लाहो तआ़ला अलैह वसल्लम से दरयाफ़्त किया कि मेरी माँ का इन्तिकाल हुआ है उनकी रूह को सवाब पहुँचाने के लिये कौन सा सदका बेहतर है हुज़ूर ने फ़रमाया " पानी बेहतर है " तो उन्होने एक कुँआ खुदवा दिया और उसके पास खड़े होकर ज़बान से यह अल्फ़ाज़ कहे।

هٰذِهٖ لِاُمِّ سَعْد

यह मेरी माँ के लिये है

यानि इससे जो लोग फ़ायदा उठायें उसका सवाब मेरी माँ को पहुँचता रहे (मिश्कात सफ़हा 169)

तो बात साफ़ है कि ज़बान से नियत के अल्फ़ाज़ अदा करना अगर ना जाइज़ होता तो हज़रत सअद कुँए के पास खड़े होकर मुँह से यह न कहते कि "यह कुँआ मेरी माँ के लिये है।" क्योंकि कुँआ माँ क ईसाले सवाब की नियत ही से खुदवाया था पता चला कि किसी कारे ख़ैर के करने के लिये दिल के इरादे के साथ ज़बान से कह लेने में भी कोई हर्ज नहीं है। इसके अलावा एक और हदीसे पाक में है :-

रसूले पाक सल्लल्लाहो तआला अलैह वसल्लम ने कुर्बानी के दो मेण्ढे सींग वाले चितकबरे ख़स्सी किये हुये ज़िबह किये और ज़िबह के वक़्त कुर्बानी और ज़िबह की दुआ पढ़ने के बाद फ़रमाया।

هٰذَا عَنِّیْ وَعَنْ مَنْ لَمْ یُضَحِّ مِنْ اُمَّتِیْ

यह मेरी तरफ से और मेरी उम्मत के उन लोगों की तरफ़ से जिन्होंने कुर्बानी नहीं की (मिश्कात सफहा 128)

अल्लाह तआ़ला दिल के इरादों से खूब वाकिफ है इसके बावजूद सरकार का ज़बान से यह फ़रमाना कि यह कुर्बानी मेरी और उम्मत के उन लोगों की तरफ से है जो कुर्बानी न कर सकें इससे साफ

पता चलता है कि किसी न किसी शक्ल में ज़बान से अल्फ़ाज़े नियत की अदायगी पैगम्बरे इस्लाम और आपके सहाबा से साबित है फिर इसको एक दम बिदअ़त और नाजाइज़ कह देना मज़हब से नावाकिफ़ी है।

रमज़ान के रोज़े किस पर फ़र्ज़ हैं।

हर मुसलमान मर्द औरत जो समझदार और बालिग़ हो उस पर रमज़ान के रोज़े फ़र्ज है नाबालिग़ बच्चे और पागल पर रोज़े फ़र्ज नही हैं। औरतों को उनके महावारी (एम.सी.) के दिनों में रोज़े रखने की इजाज़त नहीं है रमज़ान के बाद इन रोज़ों की कज़ा करे जो कमज़ोर औरत हमल यानि पेट से हो या बच्चे को दूध पिलाती हो और रोज़े रखने की वजह से अपनी या बच्चे की जान जाने या सख्त बीमारी का खतरा महसूस करे वह रोज़े कज़ा कर सकती है यूं ही हर बीमार और कमज़ोर आदमी रमज़ान के रोज़े रखने की वजह से बीमारी खतरनाक होने या जान जाने का सही गुमान करे उसको भी रोज़ा कज़ा करने की इजाज़त है।

जो शख़्स शरअन मुसाफ़िर है उसको कुरआ़न व हदीस में रमज़ान के रोज़े न रखने की इजाज़त दी गई है लेकिन सफ़र में अगर आराम हो कोई ख़ास परेशानी न हो तो रोज़ा रख लेना ही बेहतर है हाँ अगर न रखे तब भी वह गुनाहगार नहीं है जबकि रमज़ान के बाद कज़ा कर ले।

जो शख़्स बुढ़ापे की वजह से इतना कमज़ोर हो गया कि उसमें रोज़ा रखने की ताकत नहीं और आइंदा सही होने की भी कोई उम्मीद नहीं उस पर रोज़े माफ़ हैं। लेकिन हर रोज़े के बदले फ़िदया देना उस पर वाजिब है। और फिदया यह है कि हर रोज़े के बदले एक मोहताज को दोनों वक़्त पेट भरकर खाना खिलायें या हर रोज़े के बदले सदक़ा-ए-फ़ितर के बराबर गल्ला या रूपया खैरात करे। जो ज़्यादा सही तहक़ीक़ के मुताबिक तकरीबन 2 किलो 45 ग्राम गेहूँ है

आजकल सही मआनि में ज़रूरत मन्द मोहताज व मिसकीन नही मिलते आम तौर पर पेशावर फ़कीर हैं उनमें भी ज़्यादातर बे नमाज़ी फ़ासिक़ व बदकार, गुन्डे लफ़ंगे जुआरी और शराबी तक हैं लेहाज़ा दीनी मदरसों के तलबा और ज़रूरतमन्द मुस्तहक़ मस्जिदों के इमामों मोअ़ज़िज़नों को इस क़िस्म की रक़में या ग़ल्ले दे दिये जायें तो ज़्यादा बेहतर है।

वह औरतें जिनके शौहर इन्तिक़ाल कर गये और उन्होने दूसरा निकाह भी न किया ऐसे ही वह घर जिनमें एक ही कमाने वाला था वह भी बीमार हो गया इस क़िस्म के लोग अगर साहिबे जायेदाद न हों सदक़ात व ख़ैरात ज़कात के मुस्तहक हों ऐसों को तलाश करके देना चाहिये पेशावर और मांगने वालों से ऐसे ज़रूरतमन्दों को देना ज़्यादा सवाब का काम है। और उन लोगो को भी लेने में शर्म नही करना चाहिये आजकल कुछ लोगों को देखा कि वह बेईमानी ख़यानत और क़र्ज़ व उधार लेकर न देने के आदी हैं लेकिन अगर कोई ज़कात सदक़ा खैरात या फ़िदये की रक़म दे तो इस को लेने में अपनी तौहीन समझते हैं, यह उसकी भूल है।

अगर कोई शख़्स ज़कात, फ़ितरह, सदक़ा वगैरह व खैरात का मुस्तहक और ज़रूरत मन्द हो लेकिन लेने में शर्म महसूस करे तो उसको बताया न जाये कि यह ज़कात ख़ैरात है हदिया या तोहफ़ा नियोता वगैरह जिस नाम से चाहे देदे आपकी ज़कात, फ़िदया, कफ़्फ़ारा अदा हो जाएंगे।

और जिस बूढ़े के तन्दुरुस्त होने की उम्मीद न हो और साथ ही ग़रीब व नादार फ़िदया देने पर कुदरत न रखता हो उस को चाहिए कि तौबा व इस्तिग़फ़ार करता रहे उसके लिए रोज़े माफ़ हैं। (ख़ज़ाइनुल इरफ़ान)

किन चीज़ों से रोज़ा टूटता है और किन से नही

खाने पीने मर्द औरत के सोहबत करने से रोज़ा टूट जाता है

और अगर रोज़ेदार होना याद न हो भूल और धोके में यह काम हुए तो रोज़ा नही टूटता, बीड़ी सिगरेट हुक्का सिगार पीने पान तम्बाकू, सुरती, गुटखा खाने से भी रोज़ा टूट जाता है पान की पीक थूक दी फिर भी रोज़ा न रहा कान में तेल या दवा डालने से भी रोज़ा टूट जाता है । पानी अगर कान में पहुंच जाये तो रोज़ा नही टूटता । लोबान, अगरबत्ती वगैरह का धुंआ नाक या मुंह मे चला जाये इस से भी रोज़ा नही टूटता। औरत को सिर्फ छूने छेड़ने से रोज़ा नही टूटता हां अगर इन्ज़ाल हो गया यानि मनी निकल गयी तो रोज़ा जाता रहा। रोज़े की हालत में सोया और एहतलाम हो गया तो रोज़ा नही टूटेगा। रोज़े में बहालते मजबूरी इन्जकशन लगवाया जा सकता है ख्वाह रग मे लगे या गोश्त मे बर बिनाये मजबूरी गलूकोज़ वगैरह की बोतले भी चढ़ाई जा सकती है लेकिन जहां तक मुमकिन हो इस से बचना बेहतर है। उल्टी कैय अगर खुद से हो इस से रोज़ा नही टूटता हां अगर जानबूझकर क़सदन कैय की तो अगर मुंह भरकर हो तो रोज़ा टूट जायेगा।

मिसवाक करने खुशबू सूंघने, आंख में सुर्मा लगाने या दवा डालने सर या बदन पर तेल या बाम मलने से रोज़ा नही टूटता किरीम या पावडर वैसलीन या मेहंदी लगाने से भी रोज़ा नही टूटता दांतो मे मंजन मलने या ब्रुश करने से बचना चाहिये अगर किया और पेट और हलक़ में कोई चीज़ न गई तो रोज़ा नही जायेगा लेकिन एहतियात मुश्किल है इस लिये बचना ज़रूरी है।

रात में यानि जिन औक़ात मे रोज़ेदारों के लिये खाना पीना जाईज़ है इन औक़ात में मियां बीवी का हम बिस्तर होना और सोहबत करना भी जाईज़ है।

रोज़े के मकरूहात

मकरूह का मअ़ना व मतलब वह काम है कि जिनके करने से रोज़ा तो नही टूटता लेकिन सवाब में कमी होती है। और बार बार

ऐसा करने से गुनाहगार और अज़ाब का हक़दार होता है।

झूट, बदी, ग़ीबत, चुग़ली खाना, गाली देना, बेहूदा बाते करना यह सब काम नाजाईज़ गुनाह हैं, रोज़े में और ज़्यादा गुनाह हैं इनसे रोज़ा मकरूह हो जाता है और उसका नूर जाता रहता है।

बे ज़रूरत किसी चीज़ को चखा या चबाया और थूक दिया हलक़, घांटी में इसका कोई हिस्सा न गया तो ऐसा करना रोज़े में मकरूह है। और अगर कुछ हिस्सा गले में उतर गया तो रोज़ा न रहा।

खाना पकाने वाली औरत अगर उसका शौहर या मालिक बद मिज़ाज और ज़ालिम है तो वह नमक चख सकती है जब कि वह फौरन थूक दे। कोई ऐसी चीज़ खरीदी कि बग़ैर चखे खरीदने से नुक्सान हो सकता है तो चख कर देख सकता है फ़ौरन थूक देना यहां भी ज़रूरी है।

बीवी को चूमना, छूना, गले लगाना रोज़े मे मकरूह है जबकि यह ख़तरा हो कि ऐसा करने से बे काबू हो जायेगा और अपने ऊपर कंट्रोल नहीं कर सकेगा और हम बिस्तरी कर बैठेगा और यह ख़तरा न हो और अपने ऊपर पूरा भरोसा हो तो चूमना छूना लिपटना जाईज़ है। मगर अपने नफ़्स पर भरोसा करना नही चाहिये। शैतान इंसान का खुला दुश्मन है और हर वक्त साथ लगा है।

ऐसी खुशबू जिसमें धुंआ न हो इस को सूंघने से रोज़ा मकरूह नही होता। धुऐंदार खुशबू भी अगर नाक में आ जाये तो इसमें कोई हर्ज नही हां खूब ज़ोर लगाकर करीब से क़सदन जानबूझकर इतना सूंघना कि धुंआ हलक़ या दिमाग़ में पहुंच जाये रोज़े को तोड़ देता है।

तरावीह की नमाज़ से मुताल्लिक़ कुछ ज़रूरी बातें

रमज़ान की रातों में बीस रकअत तरवीह की नमाज़ इशा के फ़र्ज़ों के बाद मर्दों और औरतों के लिये सुन्नते मोअक्कदा है जो छोड़ने की आदत डाले वह गुनाहगार है कभी कभार छूट जाने में गुनाह नहीं और

उसकी जमाअत सुन्नते किफ़ाया है अगर सब लोग घरों में पढ़ें मस्जिद में जमाअत ही न हो तो सब गुनाहगार होंगे और अक्सर लोग मस्जिद में जमाअत से अदा करें और कोई शख़्स घर में पढ़े तो वह गुनाहगार नही लेकिन पांचो वक़्त फ़जर व ज़ोहर असर व मग़रिब व इशा की नमाज़ की अदायगी मज़हबे इस्लाम में सबसे अहम फ़रीज़ा है। एक वक्त की नमाज़ छोड़ना भी बड़ा हराम है और वे वजह जमाअत छोड़ने की आदत भी गुनाहे कबीरा व हराम है।

कुछ लोग कहते हैं कि तरावीह पढ़ें तो पूरी रोज़ाना महीने भर या फिर किसी दिन न पढ़ें और पाबन्दी न कर पाने की वजह से बिल्कुल नही पढ़ते तो या उनकी ग़लत फ़हमी नादानी और जिहालत है सही बात यह है कि जिस दिन पढ़ी जायेगी उस दिन का सवाब मिलेगा और जिस दिन नहीं पढ़ी उस दिन का सवाब नही मिलेगा और बे मजबूरी छोड़ने की आदत डाले तो गुनाहगार होगा

औरतों के लिये भी तरावीह सुन्नते मोअक्कदा है लेकिन इन्हे मस्जिदों में जाने की इजाज़त नही घरों में अदा करें जमाअत भी कर सकती हैं लेकिन औरत इमामत न करे कोई मर्द करे जब कि उस जमाअत से मस्जिद की जमाअत पर ख़ास फ़र्क न पड़े और जमाअत मे अगर मर्द, बच्चे और औरतें सब हों तो इमाम के पीछे मर्द फिर बच्चे फिर औरतें खड़ी हों। सिर्फ़ औरतों की इमाम अगर औरत हो तब भी नमाज़ हो जाएगी लेकिन कराहत के साथ।

कुछ लोग रमज़ान में शुरू के चन्द दिनों में हाफ़िज़ से तरावीह में पूरा कुरआन सुन लेते हैं और फिर बाक़ी दिनो तरावीह के वक्त आज़ाद घूमते हैं यह एक ग़लत तरीक़ा और रिवाज है उन पर बाक़ी दिनों की तरावीह छोड़ने का वबाल रहेगा। तरावीह में सिर्फ़ कुरआन सुनना पढ़ना ही सुन्नत नहीं बल्कि पूरे महीने तरावीह पढ़ना भी सुन्नत है और कई कई पारे एक दिन में पढ़कर चन्द दिनों में कुरआन ख़त्म कर देना भी मुनासिब नहीं बेहतर और मुनासिब

तरीक़ा यही है कि एक पारे से कुछ ज़्यादा रोज़ाना पढ़ते रहें और सत्ताईसवीं शव में कुरआन खत्म करें। इसी में हिकमत मसलेहत है और यही साहावा-ए-किराम से मरवी है।

नमाज़ में ज़्यादा लम्बी क़िरत मकरूह है

नमाज़ मे इतनी लम्बी क़िरत कि आम नमाज़ी रंजीदा परेशान हो पसंदीदा नही है वल्कि मकरूह व ममनूउ है। वुखारी व मुस्लिम की हदीस पाक मे है कि सहावी-ए-रसूल हज़रत मुआज़ बिन जवल अपनी क़ौम को नमाज़ पढ़ाते इशा की नमाज़ में सूरह वक़र तिलावत की कुछ लोगो ने हुजूर से शिकायत की तो हुजूर नाराज़ हो गये और फ़रमाया

اَفَتَّانٌ يَامُعَاذُ

ऐ माअज़ क्या तुम लोगों कोआज़माईश में डालते हो ?

(मिशकात वावुल क़िरत सफ़हा 179)

इसके अलावा बुख़ारी व मुस्लिम की ही दूसरी हदीस मे है हुज़ूर ने फ़रमाया

जब तुम में से कोई शख़्स लोगों को नमाज़ पढ़ाये तो हल्की पढ़ाये क्योंकि उनमें कमज़ोर बीमार और बूढ़े लोग भी है और जव अकेला पढ़े तो चाहे जितनी लम्बी पढ़े।

(मिशकात वावुल इमामत सफ़हा 101बुखारी जिल्द 1 सफ़हा 97)

और इस्लामी मिज़ाज यही है कि नमाज़ की जमाअत हो या कोई ज़िक्र की महफ़िल और मजलिस जो काम आम लोगो को शामिल करके किया जाये उसमें इख़्तिसार महबूव व पसंदीदा है। दीन के नाम पर ज़्यादा देर तक लोगों को रोकना उन्हे उलझन व परेशानी व आज़माईश में डालना हरगिज़ मुनासिव नही है और उनकी इस्लामी दीनी मुहव्वत का ग़लत इस्तेमाल है।

हां अगर अकेले हो तो रात दिन हर वक़्त ज़िक्र व शुक्र करें नअ़ते नज़्में पढ़ें तो कोई हर्ज नहीं है। मगर आज इस का उल्टा हो गया है। अब अकेले में ज़िक्रे खुदा हुजूर पर दुरूद या आपकी नअ़त पाक पढ़ने वाले तो न होने के बराबर हैं। पब्लिक के सामने सारी सारी रात पढ़ने और बोलने वालों की ताअदाद बहुत बढ़ गई है।

हदीस मे है हुजूर नबी-ए-करीम सल्लल्लाहो अलैह वसल्लम ने फ़रमाया

سَيَاتِيْ عَلَيْكَ زَمَانٌ كَثِيْرٌ خُطبَائُهٗ قَلِيْلٌ عُلَمَائُهٗ

एक ऐसा ज़माना आयेगा जिसमें ख़तीब व मुक़र्रिर ज़्यादा होंगे और इल्म वाले कम होंगे। (" मिनहाज उल आबेदीन" ईमाम ग़ज़ाली) और सय्यदना इमाम हसन बसरी फ़रमाते हैं

مَنْ اَمَّ النَّاسَ فِیْ رَمَضَانَ فَلْيَأْخُذْ بِهِمُ الْيُسْر

जो शख़्स़ रमज़ान में तरावीह की नमाज़ में इमामत करे वह मुक़तदियों पर आसानी करे। ऐसे ही हदीस की एक मशहूर किताब मुसन्नफ़ अब्दुल रज़्ज़ाक में है

हज़रत उमर फ़ारूके आज़म रमज़ान मे तीन क़ारी नमाज़ पढ़ाने के लिये मुक़र्रर फ़रमाते जो सबसे तेज़ क़िरत करने वाला होता उस को एक रकअत में तीस आयतें पढ़ने का हुक्म देते दरमियानी क़िरत करने वाले को पच्चीस आयतें और आहिस्ता आहिस्ता ठहर ठहर कर पढ़ने वाले को सिर्फ़ 20 आयते पढ़ने का हुक्म देते। (शरह सही मुस्लिम मौलाना गुलाम रसूल सईदी जिल्द 2 सफ़हा 501)

यह उस ज़माने की बातें हैं कि जब लोग ज़िक्र व तिलावत नमाज़ व इबादत को जान व माल बीवी बच्चों से कहीं ज़्यादा अच्छा समझते थे आज की दुनिया में पब्लिक को जमा करके तरावीह की नमाज़ में एक एक दिन में कई कई पारे पढ़ना जलसो महफ़िलों में सारी सारी रात जगाना नियाज़ो फ़ातहाओं में घन्टों बैठाना कौम को जोड़ना नही बल्कि तोड़ना है और लोगों को दीन से क़रीब लाना नहीं

बल्कि दूर करना है। खुदाये तआला समझ अता फ़रमाये।

और जो इमाम व हाफ़िज़ ज़्यादा ज़्यादा कुरआन पढ़ने के लिये जल्दी जल्दी में सही तौर पर मख़ारिज की अदायगी नहीं कर पाते या कुछ हुरूफ़ व कलमात या ज़ेर ज़बर पेश की हरकात छोड़ जाते हैं वह खुद भी बड़े गुनाहगार होते हैं और दूसरों को भी करते हैं और बजाये सवाब के अज़ाब पाते हैं और दूसरों के लिये अज़ाब बनते हैं।

और बहुत जल्दी जल्दी तेज़ी के साथ ग़लत सलत कुरआने करीम पढ़ने वाले या फ़ासिक़ व फ़ाजिर बे नमाज़ी, आवारा मिज़ाज, आज़ाद ख़्याल हाफ़िज़ के पीछे तरावीह की नमाज़ अदा करने और कुरआन सुनने से बेहतर है कि सही तिलावत करने वाले दीनदार के पीछे तीसवें पारे की आख़री दस सूरतों से नमाज़ अदा कर ली जाये जैसा कि बहुत सी जगह इसका रिवाज है।

हर रकअत में " कुलहोवल्लाह " शरीफ़ की तिलावत करके भी तरावीह की नमाज़ अदा करना मारूफ़ है और जाइज़ है। जैसाके फ़तावा आलगीरी मे है

इसी में है

और हमारे ज़माने मे अफ़ज़ल यह है कि क़िरत इतनी ही पढ़ी जाये कि जिस से लोग जमाअत से घबरा न जायें क्योंकि जमाअत में ज़्यादा लोगों का शरीक होना लम्बी किरत से बेहतर है और इमाम को चाहिये कि जब खत्म का इरादा करे तो सत्ताईसवीं शब में ख़त्म करे कुरआन के ख़त्म में जल्दी करके इक्कीसवीं तारीख़ या इससे पहले ख़त्म करना मकरूह है। (फ़तावा आलमगीरी जिल्द अव्वल सफ़हा 118)

हाँ अगर सही तौर पर कुरआन की तिलावत करने वाला इमामत का अहल हाफ़िज़े कुरआन दस्तयाब हो तो एक बार पूरे रमज़ान में तरावीह की नमाज़ में ख़त्मे कुरआन सुन्नत है बग़ैर किसी ख़ास शरअई वजह के सिर्फ़ आराम तलबी की वजह से इस

को छोड़ना सही नहीं है। आला हज़रत इमाम अहमद रज़ा बरेलवी फ़रमाते हैं ।

कौम की सुस्ती की वजह से एक कुरआने अज़ीम का ख़त्म नहीं छोड़ा जायेगा क्योंकि यह सुन्नत है और जो इस से ज़ाईद है वह छोड़ दिया जायेगा क्योंकि यह फ़ितना है।

(फ़तावा रज़विया जिल्द 7 सफ़हा 468मतबुआ लाहौर)

तरावीह की नमाज़ की क़ज़ा नही है। अगर किसी दिन की तरावीह रह गई तो दूसरे दिन उस की क़ज़ा नही की जा सकती हां तरावीह का वक़्त इशा की नमाज़ के बाद से लेकर सुबह सादिक़ तक है यानि सहरी के वक़्त ख़त्म होने से पहले जब भी पढ़े वह अदा है क़ज़ा नहीं।

जिसने फ़र्ज़ जमाअत से न पढ़े हों वह वितर की जमाअत में शरीक न हो तनहा पढ़े । हां तरावीह की जमाअत में शरीक हो सकता है।

हज़रत मौलाना मुफ़्ती अजमल शाह साहब सम्भली रहमतुल्लाह तआला अलैह लिखते हैं।

जिस मस्जिद में नीचे सेहन न हो, या कम हो और गर्मी या गर्मी के मौसम में नीचे सख़्त गर्मी मालूम होती हो और छत पर ऐसी चहार दीवारी हो जिससे किसी मकान की बेपर्दगी न होती हो तो उस ज़रूरत की बिना पर गर्मी के औक़ात में मस्जिद की छत पर नमाज़ पढ़ी जा सकती है। (फ़तावा अजमलिया,जिल्द2, सफ़हा 395)

शबीना

रमज़ान की किसी रात में नफ़्ल नमाज़ जमाअत से अदा करते हैं। और उस में एक या चन्द हाफ़िज़ों से पूरा कुरआन सुनते हैं इस को शबीना कहते हैं। आला हज़रत इमाम अहमद रज़ा ख़ाँ बरेलवी ने इसको मकरूह लिखा है और इस की इजाज़त नहीं दी है। (फ़तावा

रज़विया जिल्द नं 7 सफ़हा 72 मतंबुआ रज़ा फाउंडेशन लाहौर)

मकरूह होने की वजह यह है कि जमाअत की जाती है और लोगो को शामिल करके पूरा कुरआन पढ़ा जाता है और आम तौर पर लोग इसे बोझ समझते हैं और शरमा शरमी में शरीक रहते हैं।

सदरउश्शरिया हज़रत मौलाना अमजद अली फ़रमाते हैं।

आम तौर पर इस ज़माने मे जो शबीना पढ़ा जाता है कि एक रात में पूरा कुरआन पढ़ा जाता है इस पढ़ने की नौअियत (तरीक़ा) ऐसी होती है कि जल्दबाज़ी मे हुरूफ़ तो हुरूफ़ अल्फ़ाज तक खा जाते हैं। कुरआने करीम को सही तौर पर नही पढ़ते और सामअ़ीन (सुन्ने वाले)में कोई लेटा है कोई चाय पी रहा है कुछ ऐसी ही हालत होती है जिसकी वजह से उलमा ने शबीना नाजाईज़ होने का हुक्म दिया है। (फ़तावा अमजदिया जिल्द 1 सफ़हा 340)

हां अगर कोई साहब अकेले नमाज़ या वग़ैरे नमाज़ के एक रात मे एक या इस से भी ज़्यादा कुरआन की तिलावत करें तो कुछ गुनाह नहीं लेकिन जमाअत में ज़्यादा लम्बी क़िरत की इजाज़त नहीं।

सहरी व इफ़तार से मुताअल्लिक़ कुछ बातें

सहरी खाना और रोज़े की इफ़तार करना सुन्नत है और इनमे बड़ा सवाब ख़ैर व बरकत और अल्लाह की रहमत है। सहरी में ताख़ीर और इफ़तार में जल्दी करना सुन्नत है लेकिन ऐसी ताख़ीर या जल्दी न की जाये कि रोज़े में शक पैदा हो जाये।

खजूर या फिर छुआरे से इफ़तार करने मे सबसे ज़्यादा सवाब है यह न हो तो पानी बेहतर है सहरी खाना और इफ़तार करना सुन्नत है अगर कोई शख़्स सहरी न खाये इफ़तार भी न करे ऐसे ही रोज़े रख ले तब भी रोज़ा हो जायेगा लेकिन इस को सुन्नत का सवाब नहीं मिलेगा सफ़र वग़ैरह मे देखा गया है कि कुछ लोग

इफ़तार के वक़्त खाने पीने की चीज़ हासिल करने के लिये दौड़ते भागते और परेशान से नज़र आते हैं और इनके अमल से ऐसा महसूस होता है कि वह समझते हैं अगर इफ़तार न कर सके या इफ़तार मे ताख़ीर हो गई हो तो रोज़ा न होगा हालांकि ऐसी कोई परेशान होने की बात नहीं अगर किसी मजबूरी व परेशानी की वजह से इफ़तार न कर सका या इस में ताख़ीर हो गई तब तो कोई परेशान होने की बात ही नही है बे वजह जानबूझ कर इफ़तार न करे तब भी रोज़ा ख़राब न होगा हां ऐसा करना सुन्नत के सवाब से महरूमी और मकरूह है हां अगर सुन्नत की अदायगी की वजह से वह इफ़तार का सामान तलाश करने के लिये पेरशान होते हैं तो यह बड़ी अच्छी बात है।

इफ़तार का बेहतर तरीक़ा यह है कि कुछ खजूरें खा ले या पानी पी कर या खाने पीने की कोई और मामूली सी चीज़ जल्दी खा पी कर मग़रिब की नमाज़ जमाअत से अदा की जाये जो लोग इफ़तार के वक़्त खाने पीने में लगे रहते हैं और सिर्फ़ इस वजह से मग़रिब की जमाअत छोड़ देते हैं बजाये सवाब पाने के गुनाहगार होते हैं इफ़तार इतनी ही होना चाहिये कि नमाज़ की पहली तकबीर भी छूटने न पाये।

जहां लोग घरों से इफ़तार करके आते हों वहां इनके इन्तिज़ार में मग़रिब की जमाअत क़ायम करने में मामूली और हल्की दो चार मिनट की ताख़ीर कर दी जाये तो कुछ हर्ज नहीं लेकिन मग़रिब की नमाज़ में इतनी ताख़ीर कि तारे खूब चमकने लगें यह मकरूह है। इफ़तार की दुआ यह है।

اَللّٰهُمَّ لَكَ صُمْتُ وَعَلٰى رِزْقِكَ اَفْطَرْتُ

ऐ अल्लाह मैने तेरी इबादत के लिये रोज़ा रखा और तेरे दिये हुए रिज़्क़ से इफ़तार की

जो अरबी के कलमात अदा न कर सके वह उर्दू वगैरह मे भी

दुआ पढ़ सकता है।

सही यह है कि इफ़तार की दुआ रोज़ा इफ़तार करने के बाद पढ़ी जाये अगर कोई शख़्स पहले पढ़े तो उसको समझा दिया जाये लेकिन इस क़िस्म के मसाईल में आम लोगों को बहस व मुबाहिसे में नही पड़ना चाहिये

इफ़तार पार्टियां

आजकल रमज़ान के रोज़े की इफ़तार जो एक इस्लामी सुन्नत है वह एक फ़ैशन बन गई है इन मौजूदा दौर की फ़ैशनएबिल सियासी इफ़तार पार्टियों से बचना चाहिये इन में कई तरह की ख़राबियां पाई जाती हैं।

पहली बात तो यह है कि इन इफ़तार पार्टियों में अक्सर जगह दुनिया दार बे रोज़ेदार लोग दावत देकर बुलाये जाते हैं यहां तक कि ग़ैर मुस्लिमो तक को शरीक किया जाता है। मैं पूछता हुँ कि जिनके रोज़े नहीं या जिनके लिये रोज़े हैं ही नहीं उनको इफ़तार के नाम पर जमा करना इफ़तार कराना नही बल्कि इस्लामी कामों का एक तरह से मज़ाक उड़ाना है ग़ैर मुस्लिमों से दुनियवी ताल्लूक़ात रखने में कोई दुन्यवी तअ़ल्लुक़ात रखने में कोई गुनाह नहीं लेकिन उनके मज़हब से खुद को बचाना और अपने मज़हब को उनसे बचाना जरूरी है उनसे दुनियवी ज़ाहिरदारियां और ताल्लूक़ात तो हो सकते हैं। लेकिन मज़हबी घाल मेल नहीं होना चाहिये।

बाज़ जगह तो इन इफ़तार पार्टियों में यह तक देखा कि मालदार दौलतमन्द और सियासी रहनुमा और बे रोज़ेदारों और ग़ैर मुस्लिमों की खूब आओ भगत होती है और नमाज़ी रोज़ेदार बा शरअ दीनदार मुसलमानों की तरफ़ कोई तवज्जो नहीं दी जाती इन की ना क़दरी होती है और इन्हे भी अपनी ना क़दरी कराने में बहुत मज़ा

आता है वरना यह वहां ना जाते।

कुछ जगह इफ़्तार पार्टियों में खड़े खड़े या मेज़ कुर्सी वगैरह पर बैठ कर जूते पहने पहने खाया पिया जाता है यह एकदम शरिअत के खिलाफ़ और मकरूह है और यह सिर्फ़ इफ़्तार में ही नहीं बल्कि हर खाना जो इस तरह खाया जाये वह ममनूअ़ हैं। और हमारे बहुत से मुसलमान भाई इस पर फ़ख्र महसूस करते हैं बात दरअसल यह है कि मज़हबे इस्लाम और इस के तौर तरीक़ों को ग़ैर मुस्लिम बाद में पहले खुद मुसलमान मिटा रहे हैं और हमारे ही जनाज़े हैं और हमारे ही कांधे हैं।

इफ़्तार पार्टियों मे शरीक होकर बहुत सारे लोग मग़रिब की जमाअत छोड़ बैठते हैं बाज़ बाज़ तो सिरे से नमाज़ ही छोड़ बैठते हैं यह सब गुनाह और हराम है।

खुलासा यह कि आज की अक्सर इफ़्तार पार्टियां रोज़े के इफ़्तार कराने का सवाब हासिल करने के लिये नहीं की जाती हैं बल्कि सियासी रोटियां सेंकने और मुसलमानों को रिझाने के हथकंडे है।

हां अगर मुसलमान लोग आपस में एक दूसरे को रोज़े की इफ़्तार करायें ख्वाह घरों में बुलाकर या मस्जिदों में इफ़्तार का सामान भेज कर या राहगीर रोज़ेदारों को रोक कर तो यह सब खालिस इस्लामी काम हैं और जन्नत के सामान हैं।

अगर कोई ग़ैर मुस्लिम किसी रोज़ेदार मुसलमान को इफ़्तार के लिये खाने पीने का सामान दे तो इसको लेना और खाना गुनाह न होगा जबकि उसको एहसान जतलाने या खुद एहसान की वजह से दबने का ख़तरा न हो और यह भी नही समझना चाहिये कि उसको इस का कुछ सवाब मिलेगा जो मुसलमान नहीं उसके लियें आख़रत में कुछ सवाब नहीं हां दुनिया में इन्हें कभी कभी इनकी नेकियों का बदला और इनाम बल्कि ईमान तक दे दिया जाता है। अल्लाह व रसूल की रहमत दुनिया में ग़ैर मुस्लिमों के लिये भी है लेकिन

आख़रत व जन्नत तो सिर्फ़ गुलामाने मुहम्मद मुस्तफ़ा के लिये है सल्ललल्लाहो अलैह वसल्लम

सहरी व इफ़्तार के ऐलानात

· रसूले पाक सल्लल्लाहो अलैहवसल्लम के ज़माना-ए-पाक में सहरी के औक़ात की इत्तिला देने के लिये अलग से कोई और तरीक़ा राइज न था मग़रिब और फ़जर की अज़ानें थीं जिन से लोगो को ख़त्मे सहरी और वक़्ते इफ़तार का पता चलता था। बाद में इत्तिला देने के जो और तरीक़े राइज हुए उनमें कोई ख़िलाफ़े शरअ बात न हो तो कुछ हर्ज नहीं क्योंकि हर काम अगरचे वह ज़माना-ए-पाक रिसालत मआब मे न हुआ हो लेकिन इसमें कोई ख़िलाफ़े शरअ बात ना पाई जाती हो वह जाइज़ है सहरी इफ़तार के लिये भी अगर इस क़िस्म की आवाज़ से लोगों को मुत्तला किया जाये कि जिसमें मोसिक़ी, गाने बजाने, राग मज़ामीर का अन्दाज़ न हो सिर्फ़ आवाज़ हो जिसमें कोई सुर न हो जाइज़ है जैसे नक़्क़ारे, सायरन या सीटी बजाना, गोले दाग़ना, बन्दूक़ छोड़ना वग़ैरह जाइज़ है। और अब चूंकि लाउडस्पीकर से अज़ानें होती हैं जिनकी आवाज़ें हर शख़्स को आसानी से पहुंच जाती हैं तो सिर्फ़ अज़ानों ही से काम चलाना ज़्यादा बेहतर है और आवाज़ों की अब कोई ख़ास ज़रूरत नही है।

लेकिन आजकल रमज़ान के महीने में जो सहरी के एलानात लाउडस्पकीकर से होते हैं इनमें हमारी राय यह है कि लोगों को ख़त्मे सहरी से सिर्फ़ एक घण्टा पहले ही जगाया जाये और फिर हर दस पन्द्रह मिनट के बाद एक दो जुमले बोल कर वक़्त बताते रहें रात के वक़्त में लाउडस्पीकर के इतने इस्तेमाल की इजाज़त बहुत काफ़ी है।

सहरी में हल्की फुल्की और मामूली ग़िज़ा खाना सुन्नत है तरह तरह के खाने पकाकर लवाज़मात के साथ ठूंस कर सहरी खाना

पसन्दीदा नही है।

हदीस पाक मे है रसूले खुदा सल्लल्लाहो ने फ़रमाया

نِعْمَ سُحُوْرُ الْمُوْمِنُ التَّمْر

मोमिन के लिये बेहतरीन सहरी छुआरे या खजूरे हैं

इससे ज़ाहिर है कि दूसरे खाने भी खाये जा सकते हैं लेकिन हदीस पाक से यह अन्दाज़ा हो जाता कि ज़्यादा बेहतरीन गिज़ा वह है जिसको तैयार करने पकाने की ज़रूरत न पड़े हां पकाई और तैयार की हुई चीज़ें भी खाई जायें तो उनमें ज़्यादा एहतमाम व इन्तिज़ाम से बचा जाये क्योंकि सहरी में खूब पेट भर कर खाना सुन्नत के ख़िलाफ़ है तो उसके लिये खाना तैयार करने वाली घर की औरतों या नौकरों व नौकरानियों को आधी रात से उठाने और जगाने की क्या ज़रूरत है।

कुछ घरों में तो गर्मियों में खाना बनाने वाली औरतों की सारी रात तरह तरह के खाने तैयार करने में गुज़र जाती है यह इनके साथ एक तरह की ज़्यादती है और अपने ऐश व आराम के लिये दूसरों को परेशान करना मोमिन की शान नही। और सहरी में जब हल्की फुल्की सादा ग़िज़ायें सुन्नत और ज़्यादा एहतमाम व इन्तिज़ाम और तरह तरह के खाने पकवाना और खाना बे ज़रूरत है तो कई कई घण्टे पहले से लाउडस्पीकर के ज़रिये हंगामा और शोर मचा कर मख़लूके खुदा को जगाने बल्कि सताने की क्या ज़रूरत है। आधा घण्टा तैयार करने और आधा घण्टा खाने के लिये काफ़ी है और जो ऐश पसंद सारी रात तरह तरह के खाने पकाने पकवाने और खाने में ही गुज़ार देते हैं तो उनकी वजह से सबको उठाने की क्या ज़रूरत है।

लाउडस्पीकर का बेजा इस्तेमाल

सहरी खाने पकाने के वक़्त मुसलसल लाउडस्पीकर के ज़रिये नाअ़ते नज़्में या तक़रीरे सुनाना या इनकी कैसेट बजाना किसी सूरत मुनासिब नही है बल्कि इस में नुक़्सान और गुनाह का पहलू भी निकल सकता है।

हो सकता है कोई बन्दा-ए-खुदा इबादत व तिलावत में मशगूल हो और आप उसके काम में ख़लल डालते हों अल्लाह की इबादत और कुरआन की तिलावत और ज़िक्र व शुक्र तस्बीह वगैरह का यह सबसे उम्दा और अफ़ज़ल वक्त है।

मुसलमानों में बहुत से लोग वह भी हैं जिन पर रोज़े फ़र्ज़ नही मसलन हैज़ व निफ़ास वाली औरतें, मुसाफ़िर, सख़्त बीमार, बहुत ज़्यादा बूढ़े छोटे बच्चे उनकी नीन्द ख़राब करना इज़ाये मोमिन है कुछ घरों में ग़म व रंज सदमे का माहौल होता है लाउडस्पीकर की तेज़ आवाज़ इनके लियें बड़ी मुसीबत से कम नहीं होती।

जहां आसपास ग़ैर मुस्लिमों की आबादियां हैं इनको आप के रोज़े से क्या मतलब उनकी नीन्दें ख़राब करना उन्हे बे मक़सद परेशान करना ख़िलाफ़े मसलेहत बल्कि ख़िलाफ़े मज़हब है क्योंकि इस तरह हमारे मज़हब की ग़लत शक्ल व सूरत लोगो के ज़हन में आयेगी कि यह आम आदमी को परेशान करने वाला और आधी आधी रात से उनकी नींदें ख़राब करने वाला मज़हब है वह अपने मज़हबों और धर्मो के नाम पर कुछ भी करें लेकिन हमारे मज़हब की सही और असली शक्ल व सूरत दुनिया के सामने आना चाहिये क्या आप ने कभी ग़ौर किया कि क्या वजह है कि हमेशा ग़ैर मुस्लिम तो मुसलमान बनते आये हैं और आज भी बनते हैं लेकिन कोई मुसलमान कभी किसी दूसरे मज़हब में दाख़िल नही होता ख़्याल रहे

कि यह तभी तक है जब तक हमारे मज़हब का असली चेहरा दुनिया के सामने रहेगा।

मेरे ख़्याल मे तो इस वक़्त हिन्दुस्तान में जितने मज़हबी और मसलकी झगड़े लड़ाईयां और फ़साद होते हैं उनमें बड़ा दख़ल लाउडस्पीकर के बे जा इस्तेमाल का है।

इसमे कोई शक नही कि हक़ पसन्दो को भी कभी कभी मज़हब व जान व माल इज़्ज़त आबरू की हिफ़ाज़त के लिये हथियार उठाना पड़ जाते हैं लेकिन इसमें भी कोई शक नहीं कि मज़हब लड़ाई दंगो मारकाट से न फैले हैं न फैलते हैं। और लाउडस्पीकर के लिए झगड़े लड़ाइयां करना बे मक़सद है।

और अब तो बहुत दूर तक आवाज़ फेकने वाले माइक्रोफ़ोन चल पड़े हैं और हर छोटी बड़ी महफ़िलों, मजलिसों, जलसों के लियें वह ज़रूरी से होते जा रहे हैं यह कोई ज़्यादा अच्छी बात नहीं है ऐसा लगता है कि दीन जो दिलों में था वह ज़बानों पर आया और फ़िर वहाँ से निकलकर लाउडस्पीकर में पहुँच गया दिल व ज़बान सब खाली से हो गये।

मैंने कई जगह की रिर्पोर्टें सुनी हैं कि किसी नई जगह नमाज़ शुरू की गई तो किसी को एतराज़ न हुआ लेकिन जब लाउडस्पीकर लगाकर धांसू तकरीरें वहाँ की गईं नातों नज़मों की कैसिटे बजाई गयीं तो ग़ैर मुस्लिमों के कान खड़े हुये और फ़िर जो नमाज़ व जमाअ़त होने लगी थी वह भी रूकवा दी गई।

बात का खुलासा और निचोड़ इस वक़्त यही है कि रमज़ान में सहरी पकाने खाने के औक़ात में मुख़्तसर ऐलान के ज़रिये थोड़ी थोड़ी देर के बाद लोगों को वक़्त की इत्तेला देते रहें यही काफी है कैसेट लगाने और नातें नज़में और तक़रीरें सुनाने के लियें यह मुनासिब वक़्त नहीं है।

और बाज़ जगह तो यह अन्धेर है कि मोहल्ले या बस्ती में

करीब करीब मस्जिदें हैं और रमज़ान में सहरी के वक़्त हर मस्जिद से तेज़ आवाज़ वाले लाउडस्पीकर के ज़रिये नातिया और तक़रीरी प्रोग्राम नशर किये जा रहे हैं और आवाज़ें एक दूसरे से टकरा रही हैं और सिवाये शोर और हंगामे के कुछ भी समझ में नहीं आ रहा है ऐसा लग रहा है कि जैसे दीनी बातों और इस्लामी आवाज़ों के साथ खिलवाड़ सा हो रहा है।

और आजकल दिल दिमाग़ के मरीज़ों की तादाद बहुत तेज़ी से बढ़ गई है और बढ़ रही है ऐसे मरीज़ों के लिये तेज़ आवाज़ें सख़्त नुक़सान देने वाली हैं और यह जो माहौल सामने आया है कि हर शख़्स फ्री है जो जब जहाँ चाहे मजलिसों, महफिलों या ऐलानात के नाम पर अपने घर या किसी मज़हबी मुक़ाम से लाउडस्पीकर लगाकर ज़बरदस्ती लोगों को सुनाना या परेशान करना शुरू कर देता है इसपर पाबन्दी की सख़्त ज़रूरत है ख़्वाह किसी मज़हब का मामला हो और यह मज़हब का ग़लत इस्तेमाल है।

महफ़िलों मजलिसों में इस क़िस्म के माइक्रोफ़ोन इस्तेमाल किये जायें जिनकी आवाज़ अन्दर पिंडाल या हाल मे रहे खासकर रात के वक्त। एक अज़ीम इस्लामी बुज़ुर्ग आला हज़रत इमाम अहमद रज़ा बरेलवी से बुलन्द आवाज़ से कुरआन की तिलावत के बारे में पूछा गया तो फ़रमाया :

कुरआन मजीद की तिलावत आवाज़ से करना बेहतर है मगर न इतनी आवाज़ से कि अपने आप को तकलीफ़ या किसी नमाज़ी या ज़ाकिर के काम में खलल हो या किसी जायज़ नींद सोने वाले की नींद में खलल आये या किसी बीमार को तकलीफ पहुँचे या बाज़ार या सराये आम हो या लोग अपने कामकाज में मशगूल हों और कोई सुनने के लियें हाज़िर न रहेगा इन सब सूरतों में आहिस्ता ही पढ़ने का हुक्म है। (फ़तवा रिज़विया जिल्द 23 सफ़हा 383 मतबूआ रज़ा फाउन्डेशन लाहौर)

एक और जगह लिखते है:

मगर ऐसा जेहर (ज़ोर से पढ़ना) जिससे किसी की नमाज़, तिलावत या नींद में खलल आवे या मरीज़ को ईज़ा (तकलीफ़) पहुँचे नाजाइज़ है। (फ़तावा रिज़विया मज़कूरा सफ़हा 180)

और कोई भी ज़िक्रे ख़ैर वह कुरआन की तिलावत हो या नातें नज़्में तकरीरें जब लोग सुनने के लियें आमादह तैयार न हों अपने काम काज में मशगूल हों तो ज़बरदस्ती उन्हे नहीं सुनाना चाहिये इससे कलामे ख़ैर की अहमियत घटती है और अवाम की नज़र में वैल्यू कम होती है और हो ही रही है खासकर जबसे लाउडस्पीकर चला है तब से।

नमाज़ मस्जिद में और ज़रूरियात घर पर

रमज़ान शरीफ़ के मुबारक महीने में आम तौर पर मस्जिदों में नमाज़ियों की तादाद खूब ज़्यादा हो जाती है भीड़-भाड़ और रौनक में काफी इज़ाफ़ा हो जाता है खुदा करे पूरे साल ऐसा ही माहौल रहे और हर मुसलमान भाई रोज़ाना का नमाज़ी बन जाये।

यहाँ हमें यह बताना है कि इस भीड़-भाड़ की वजह से अक्सर जगह मस्जिदों में वुज़ू करने या दीगर ज़रूरियाते नमाज़ की अदायगी में दिक़्क़त और उलझन पैदा होती है कई जगह कई लोगों को मैंने देखा कि वह इस्तन्जा करने के लिये लाइन में लगे फ़िर वुज़ू के लिये और उनकी जमाअ़त निकल गई, या कुछ रकअ़तें छूट गईं और इस सबकी वजह लोगों को इस्लामी मालूमात न होना है।

इस्लामी मिज़ाज यह है कि जमाअ़त से नमाज़ तो मस्जिदों में अदा करना चाहिये और दीगर ज़रूरियात गुस्ल, वुज़ू इस्तन्जा वगैरह घर से करके आने में ज़्यादा सवाब है। पहले ज़माने में मस्जिदों में वुज़ू, गुस्ल इस्तन्जाखाने नहीं बनाये जाते थे सब लोग घरों से ही

फ़ारिग़ होकर आते थे बाद में बनाये गये लेकिन यह भी उन लोगों के लिये जो मुसाफ़िर या परदेसी हों। मुकामी लोगों के लिये इसी में मस्लेहत है और इसी में ज़्यादा सवाब है कि वह घरों से फ़ारिग़ होकर आयें और पेशाब घर या पाखाना वगैराह मस्जिद में इतने करीब हों कि उनकी बदबू मस्जिद में आती है यह बहुत ज़्यादा बुरी बात है ऐसा करने या कराने या देखकर कुछ न कहने वालों को खुदा के अज़ाब से डरना चाहिये।

अब तो यहाँ तक देखने में आता है कि बेनमाज़ी बेग़ैरत लोग मस्जिद में आते हैं और उनसे मुत्तसिल नमाज़ियों के लिये बनायें गये गुस्लखानों लैटरीनों पेशाबघरों वगैराह में अपनी ज़रूरत पूरी करते हैं और बगैर नमाज़ पढ़े चले जाते है। ऐसे लोगों को इन हरकतों से रोकने के लिये अगर समझाने से न रूकें तो ताक़त का इस्तेमाल किया जाये तो बेजा नहीं है और मुबारक हैं वह ताकतें कुव्वतें जो दीन के लिये काम में आये।

और जो ज़रूरियात की जगहें मस्जिदों की आमदनी से तैयार की गई हैं नमाज़ियों को भी नमाज़ के औक़ात के अलावा उनके इस्तेमाल से बचना चाहिये।

आला हज़रत फ़रमाते हैं : कुँए की मुमानेअत नहीं हो सकती रस्सी डोल अगर मस्जिद का है उसकी हिफ़ाज़त करें ग़ैर नमाज़ के लिये इंससे पानी न भरने दें। (फ़तावा रिज़विया जिल्द नं0 8 सफ़हा 110 मतबूआ लाहौर)

हुज़ूर मुफ़्ती-ए-आज़म हिन्द मौलाना मुस्तफ़ा रज़ा खाँ बरेलवी फ़रमाते है:

अगर नल लगाने वाले की ख़ास मस्जिद ही के लिये नियत हो कि वुज़ू व गुस्ल वगैरह ख़ास नमाज़ के लिये तहारत ही के काम में लिया जाये या इस नल के पानी की कीमत मस्जिद के माल से अदा की जाती है तो इसका पानी घरों को ले जाना जायज़ नही।

(फ़तावा मुस्तफ़विया सफ़हा 269 मतबूआ रज़ा अकेडमी मुम्बई)

मस्जिदों को शोर से बचाइये

मस्जिदों में शोर हंगामे करना उनमें बहस व मुबाहिसे और लड़ाई झगड़े करना चींखना पुकारना ज़ोर ज़ोर से बोलना सब गुनाह है और हुज़ूर सल्लल्लाहो तआ़ला अलैह वसल्लम ने इसे कयामत की निशानियों मे से बताया है दरअस्ल बात यह है कि अब लोग इतने दुनियादार हो गये हैं कि वह खुदाये तआ़ला से नहीं डरते लेकिन उनका यह निःडरपन उन्हे अज़ाबे इलाही से बचा न सकेगा।

मस्जिदों को ख़ासकर नमाज़ के औक़ात में तेज़ आवाज़ वाले बिजली के पंखों, कूलरों और जनरेटरों से बचाना बहुत ज़रूरी है आजकल लोग इससे ग़ाफ़िल हैं और यह सरासर इस्लाम के खिलाफ़ है अगर गर्मी ज़्यादा हो तो बेआवाज़ के या हल्की आवाज़ वाले पंखों से काम चला लिया जाये और उनकी तादाद उतनी ही रखी जाये कि जिनसे काम चल जाये। थोड़ी बहुत परेशानी उठाने की आदत डालना भी बहुत ज़रूरी है ख़ासकर अल्लाह तआ़ला और उसके दीन के लिये दुनिया की परेशानी आख़िरत का आराम है।

कूलरों में उमूमन आवाज़ ज़्यादा होती है इनका इस्तेमाल मस्जिदों में मुनासिब नहीं है। और जनरेटरों को मस्जिदों के आसपास नहीं होना चाहिये और बिजली के पंखों वगैरह का इस्तेमाल भी ज़रूरत के वक़्त ज़रूरतभर ही होना चाहिये जब गर्मी हो तो चलायें।

मौसम की तीन हालतें होती है। गर्मी, सर्दी, न गर्मी न सर्दी (नार्मल) जब गर्मी हो तबही ज़रूरत के लायक पंखे वगैरह चलाये जायें। और जब गर्मी न हो यानि सर्दी हो या न गर्मी न ठण्डक तो ऐसे वक़्त चलाना बेज़रूरत है फुज़ूल ख़र्ची है इसका खुदाये तआ़ला के यहाँ हिसाब भी देना पड़ सकता है।

एक मर्तबा मैं एक मस्जिद में नमाज़ पढ़ने गया न गर्मी थी न ठण्डक मौसम नार्मल और बहुत खुशगवार था पंखे चल रहे थे दिन का वक़्त था मच्छर वगैराह भी न थे मैं ने उन्हे बन्द कर दिया तो एक साहब बड़े नाराज़ होकर बोले क्या आपको ठण्ड लग रही है मैंने कहा क्या आपको गर्मी लग रही है? तो वह खामोश हो गये कोई जवाब न बन पड़ा।

घरों में भी इन बातों का ख़्याल रखना चाहिये और हर किस्म की फुजूल खर्चियों से बचना चाहियें। ख़्याल रहे कि ज़्यादा आराम तलब बन जाना परेशानियों को दावत देना है दुख में सुख है और सुख में दुख आराम में परेशानी है और परेशानी में आराम है।

आज लापरवाहियों का यह आलम है कि घरों कमरों और हुजरों में बाहर से ताले पड़े हैं अन्दर पंखे चल रहे हैं बल्ब जल रहे हैं कमरे बन्द करने का ध्यान रहा लेकिन सुइच बन्द करने का ध्यान नहीं होता या जानबूझकर लापरवाही बरतते हैं, मौसम नार्मल है और पंखे कूलर, ए.सी चलाये जा रहे हैं बन्द कमरे हैं और लिहाफ़ गद्दे भी और बेज़रूरत सारी रात हीटर जलाये जा रहे हैं रातों में इतनी तेज़ रौशनियां की जा रही हैं के बिल्कुल दिन बनाने के चक्कर में पड़े हैं यह सब फुजूल खर्चियां शरअ़न भी ममनूअ़ हैं और बीमारियों को दावत देना भी है और आदतें खराब करके खुद को मुसीबत में डालना भी है।

और मस्जिदों का तो यह हाल कर रखा है कि दिन भर अपने काम धंधो के लिये खेतों, पैरों, जंगलों, दुकानों, मकानों और फैक्ट्रीयों, कारखानों में गर्मी में सड़ने वाले भी जब मस्जिद में आते हैं तो बिजली का बटन देखते और खोलते आते हैं मस्जिदों में दस पाँच मिनट के लिये भी मामूली सी परेशानी बर्दाश्त नही है। जहाँ नफ्सकुशी रियाज़तव मुजाहिदे होते थे अब वह मस्जिदें ऐशकदे और आरामगाहें बनती जा रही हैं। लोग होश खो बैठे हैं अब मौत ही इन

सोने वालों को जगायेगी।

छोटे बच्चों को मस्जिदों में न आने दें

छोटे कमसिन बच्चे जो नमाज़ की अहमियत को नहीं जानते वह इसको भी एक तरह का खेल समझते हैं मस्जिदों में कूदफांद मचाते हैं उन्हें मस्जिद में आने से रोकना ज़रूरी है उन्हें नमाज़ सिखाना और याद कराना हो तो घरों और मदरसों में सिखाई जाये जब कुछ समझदार हों तो मस्जिदों में लाया जाये। हदीस पाक में है: अपनी मस्जिदों को अपने छोटे बच्चों और पागलों से बचाओ।

(इब्ने माजा बाब मायकरहो फ़िल मसाजिद सफ़हा 55)

इस्लाम में सबसे अच्छा काम

इस्लाम मज़हब में सबसे अच्छा काम खुदा के घर यानि मस्जिदों को बनाना उन्हे आबाद करना या कराना उनकी देखभाल रखना और पांचो वक्त की नमाज़ पढ़ना है मस्जिदों को आबाद करने उनमे नमाज़ पढ़ाने अज़ान देने उनकी सफाई सुथराई करने वालों को भी हर तरह खुश रखना चाहिये ताकि खुदा के घर खुदा के ज़िक्र से आबाद रहें कुछ खानकाहो दरगाहों पर मैने देखा कि वहां लोग जाते हैं और वहां के सज्जादों पीरज़ादों मुजाविरों को लम्बी लम्बी रकमें नज़राने के तौर पर दे आते हैं लेकिन वहां या आबादियों में जो मस्जिदे हैं उनके इमामों मोअज़्ज़िनों सफाइ सुथराई रखने वालों की तरफ़ नज़र उठाकर नही देखते इन्हे चाहिये कि उन्हे भी ज़रूर नज़राने दिया करें। मस्जिदों को आबाद करने और कराने में जो रक़मे खर्च होती हैं वह इस्लाम में सबसे बेहतर खर्चा है और अल्लाह को राज़ी करने का सबसे बेहतर तरीका आख़िर जो वली और बुज़ुर्ग बने हैं वह भी तो अल्लाह के घरों से और उसकी इबादत

व ज़िक्र करने से बने हैं।

एतिकाफ़ का बयान

रमज़ान शरीफ़ के आख़िरी अशरे में मस्जिद जमात (जिस मस्जिद में बा जामाअत नमाज़ अदा की जाती है।) में एतिकाफ़ की नीयत से ठहरना सुन्नते मुअक्किदा किफ़ाया है। अगर मुहल्ले बस्ती का एक शख़्स अदा करे तो सबके ज़िम्मे से उतर जायेगा और कोई न .्र तो सब तारिके सुन्न्त हुए। बीस तारीख़ को सूरज डूबने से कुछ पहले मस्जिद में पहुंच जाए और फिर 29 को चांद देखकर या 30 को सूरज डूबने के बाद मस्जिद से बाहर आए। जो एतिकाफ़ करे उसके लिए इन दिनों में हर वक़्त मस्जिद में ही रहना ज़रूरी है। पाख़ाने, पेशाब, गुस्ले फ़र्ज़ या दूसरी मस्जिद में जुमा पढ़ने के लिए मस्जिद से बाहर जा सकता है। जब कि जिस मस्जिद मैं एतिकाफ़ के लिये बैठे हैं उस में जुमा न होता हो इस किस्म की शरई या तबई ज़रूरतों के बग़ैर बाह.र आने से एतिकाफ़ टूट जाएगा।

सदरुश्शरीया मौलाना अमजद अली साहब रहमतुल्लाह तआला अलैह ने लिखा है कि फ़नाऐ मस्जिद यानी मस्जिद के अन्दर की वह जगहें जो नमाज़ के अलावा दूसरे कामों के लिए बनायी गयी हैं, जैसे ़ुस्ल ख़ाना, जूते उतारने की जगह। ऐसी जगहों में आने से एतिकाफ़ नहीं टूटता। (फ़तावा अमजदिया, जिल्द 1, सफ़हा 399)

फ़क़ीहे मिल्लत हज़रत मुफ़्ती जलालुददीन अहमद अमजदी साहब रहमतुल्लाह तआला अलैह ने भी यही लिखा है। (फ़तावा फ़ैज़ुर्रसूल, जिल्द 1, सफ़हा 535)

एतिकाफ़ में बैठने वाला मस्जिद के अन्दर ज़िक्र व तिलावत, नफ़्ल नमाज़, दुरूद शरीफ़ वग़ैरह में मशग़ूल रहे। दीनी इस्लामी किताबों का मुताला, दीन की बातें सीखना सिखाना, पढ़ना पढ़ाना भी

बेहतरीन इबादत है। और मोतकिफ़ के लिए यह सब जाइज़ है। दुनियवी बातें करने से भी एतिकाफ़ नहीं टूटता। लेकिन ज़्यादा दुनियवी बातें करने से एतिकाफ़ बे नूर हो जाता है और सवाब में कमी होती है। कुछ लोग एतिकाफ़ में ख़ामोश और चुप चाप बैठे रहते हैं और इसी बे मक़सद चुप रहने को इबादत और सवाब का काम समझते हैं । यह उनकी ग़लतफ़हमी है। एतिकाफ़ में चुप रहना भी जाइज़ है लेकिन सिर्फ़ उसको इबादत व सवाब समझना जहालत व बेवक़ूफ़ी है। मोतकिफ़ के लिए मस्जिद में खाना पीना, लेटना बैठना और सोना जाइज़ है।

शबे क़द्र का बयान

शबे क़द्र बड़ी फ़ज़ीलत वाली रात है। क़ुरआन करीम में इस एक रात की इबादत को एक हज़ार महीनों की इबादत से बढ़कर बताया गाया है।

ज़्यादा सही बात यह है कि रमज़ान शरीफ़ के आख़िरी दस दिनों में 21,23,25,27 और 29वीं रातों में से वह एक रात होती है। लिहाज़ा शबे क़द्र की फ़ज़ीलत हासिल करने के लिए काफ़ी मुसलमान भाई इन सारी रातों में रात भर इबादत करते हैं ।

आजकल शबे क़द्र और शबे बरात में भी बहुत तेज़ और बहुत दूर तक आवाज़ फेंकने वाले माइकरोफोन लगाकर सारी सारी रात तक़रीरें और नज़्में पढ़ने का रिवाज हो गया है। यह सब भी मुनासिब नहीं है और मुझको इसमें कुछ भलाई नज़र नहीं आती कि न ख़ुद ज़िक्रो इबादत व तिलावत करो न दूसरों को करने दो। अगर हो भी तो बग़ैर माइक के हो या घंटे डेढ़ घंटे प्रोग्राम चलाकर एकदम ख़ामोशी कर दी जाए और लोगों को नफ़्ल नमाज़ व क़ुरआन पढ़ने का भी मौक़ा दिया जाए और आजकल के अकसर मुक़र्रिरों की

तक़रीरें और शाइरों की शाइरी में कोई नेकी नज़र नहीं आती और न ही उन्हें दीन सीखने सिखाने का शग्ल कहा जा सकता है सिवाए जज़्बात व जोश और तरह तरह के अन्दाज़ और तरज़ों के कुछ हासिल नहीं होता। और आज के दौर में इबादत के लिए भी लाउडस्पीकर ज़रूरी सा हो गया है यह बात क़ाबिले अफ़्सोस है। और जो लोग इन रातों में सारी रात इबादत न करसकें उन्हें चाहिय कि कुछ देर नफ़िल नमाज़ और कुरान की तिलावत में गुज़ार लें।

चाँद देखने, ईद करने से मुतआ़लिक मशवरह

ईद-उल-फ़ितर के चाँद के बारे में लोग बहुत परेशान रहते हैं सारी सारी रात इधर उधर फिरते और जागते हैं जब कि हदीसे पाक में रसूले पाक का साफ इरशाद है कि 29 को चाँद देखा जाये तो ठीक अगले दिन रोज़ा न रखो ईद मनाओ और बादल, गर्द, गुबार किसी वजह से नज़र न आये तो तीस रोज़े पूरे करो।

अगर आपको या आपकी बस्ती वालों को 29 का चाँद दिखाई न दिया और आप तक शरअ़न सबूत भी न पहुँचा तो भले ही दूसरे मकामात पर ईदें मनाई जायें लेकिन आपने रोज़ा रखा आप पर हरगिज़ कोई गुनाह नहीं जब गुनाह नहीं तो फ़िर परेशान होने और भागे भागे फिरने की क्या ज़रूरत है। और अल्लाह तआ़ला दिलों के हालात व ख़्यालात को खूब जानता है और अज़ाब व सवाब की कुन्जी उसी के हाथ में है और वह परवरदिगार निहायत करीम व रहीम है और वह हर जान पर उतना ही बोझ डालता है जो उसके बस की बात है।

और मुफ़्तियाने किराम को चाहिये कि जब आसमान साफ़ हो तो एक दो बस्तियों के दस बीस लोगों के कहने से चाँद होने का फ़तवा न दें यह ही हुक्मे शरअ़ है और अब तो दुनिया में झूठे

मक्कार फरेबकार धोखेबाज़ों की तादाद बहुत ज़्यादा हो गई है। और खुदाये तआ़ला से डरने वाले कम और न डरने वाले ज़्यादा हैं।

आम लोगों को चाहिये कि सबर व सुकून से अपने अपने घरों में रहें भागे भागे न फिरें फोनबाज़ी न करें जो काम जिसका है उसको उसी पर छोड़ दें आलिमों, मुफ़्तियों, मौलवियों को परेशान न करें कि देहली से ऐलान हो गया लखनऊ में चाँद हो गया। मैं कहता हूँ कि जब देहली और लखनऊ में चाँद होने का ऐलान हो गया तो आप वही जाकर ईद मना लें यहाँ लोगों को परेशान खासकर मौलवियों की नाक में दम न करो और आजकल बड़े बड़े शहरों में हुकूमत के चम्चे सरकारी मौलवी भी बहुत हैं वह अहकामे शरअ़ को पेश नज़र रखकर फ़तवे नहीं देते बल्कि हुकूमत के नुमाइन्दे आला अफ़सरान इनसे जब जो चाहते हैं लिखवा लेते हैं। खुदाये तआ़ला इन सरकारी मौलवियों के फ़ितने से हर मुसलमान को महफ़ूज़ फ़रमाये।

वह शख़्स कि कद जिसका उन सबमें बड़ा था
देखा तो वही ग़ैर के कदमों में पड़ा था

ईद से मुतआ़लिक कुछ बातें

ईद इस्लामी त्यौहार है और इस दिन कुदरती तौर पर हर मुसलमान को फ़ितरी खुशी हासिल होती है और यह अल्लाह तआ़ला का खुसूसी करम है कि उसने बनाम इस्लाम मुसलमानों को जो मज़हब अ़ता फ़रमाया उसमें इन्सानी फ़ितरत के तक़ाज़ों से महरूम नहीं रखा गया खुशी मनाना खुश रहना इन्सानी फ़ितरत है बल्कि एक हदीस का मफ़हूम है कि मोमिन मोमिन से मुस्कराकर हँसमुख चेहरे के साथ मुलाकात करता है तो इसमें भी उसको सवाब मिलता है।

और ईद एक ऐसा त्यौहार है कि इसमें बस्ती से बाहर जाकर खुले आसमान के नीचे अल्लाह तआ़ला की इबादत भी होती है और

त्यौहार की खुशी भी। हदीस में आया है कि रमज़ान के रोज़े रखकर कुछ बन्दगाने खुदा ईदगाह में ईद की नमाज़ पढ़ने के लियें जमा होते हैं और वह जब घरों को लौटते हैं इससे पहले उनके सारे गुनाह माफ कर दिये जाते हैं और उनकी बख्शिश और मग़फ़िरत का ऐलान फ़रिश्तों में कर दिया जाता है।

ईद की नमाज़ ईदगाह में पढ़ना सुन्नत है लेकिन मस्जिद में भी जायज़ है ईद के दिन मिसवाक करना, गुस्ल करना, खुश्बू लगाना, ईदगाह को एक रास्ते से जाना और दूसरे रास्ते से वापस आना सुन्नत है ईदगाह को जायें तो यह ज़िक्र करते हुये जायें और यही पढ़ते हुये आयें

اللّٰهُ اَكْبَر اللّٰهُ اَكْبَر لاَ اِلٰهَ الا اللّٰه وَاللّٰهُ اَكْبَر اللّٰهُ اَكْبَر وللّٰهِ الحمد

अल्लाह बड़ा है, अल्लाह बड़ा है, अल्लाह के अलावा कोई माबूद नहीं, और अल्लाह बड़ा है, अल्लाह बड़ा है, और अल्लाह ही के लिये सारी तारीफ़ें हैं।

ईद के दिन लोगों से खुश होकर खिले चेहरे से मिलना चाहिये अगर कोई ग़म भी हो तो उसको चेहरे से ज़ाहिर न होने दें।

ईद-उल-फ़ितर की नमाज़ के लिये निकलने से पहले कुछ खा पी लें ख़ासकर कोई मीठी चीज़ और अगर चन्द छुआरे या खजूरें खा ली जायें तो सबसे बेहतर अफ़ज़ल और सुन्नत है। ईद-उल-फ़ितर की नमाज़ से पहले सदका-ए-फ़ितर निकालना हर साहिबे निसाब पर अपनी और अपने अयाल में से हर एक की तरफ़ से वाजिब है जिसकी मिकदार ज़्यादा सही तहक़ीक़ के मुताबिक 2 किलो 45 ग्राम गेहूँ या उनकी कीमत के पैसे या कोई और जिन्स। जब ईदगाह या मस्जिद में ईद की नमाज़ पढ़ने जायें तो ईद की नमाज़ से पहले वहाँ कोई और नमाज़ न पढ़ें यह गलत है हदीस पाक में इससे मना किया गया है चाहे वह कोई कज़ा नमाज़ हो या नफ़िल।

मस्जिदों और ईदगाहों में भीख मांगने वालों अपनी ज़ात के

लिये सवाल करने वालों को न आने दें और न उन्हें सफ़हों में घूमने दें और न ही किसी भिखारी को भीख का ऐलान करने दें। दीनी तहरीकों और उनके चन्दों और तकरीरों की भी एक हद होना चाहिये ईदगाहों में उनकी ज़्यादती अच्छी नहीं ऐसा न हो कि नमाज़े ईद कम ज़रूरी और यह काम ज़्यादा ज़रूरी होकर रह जायें जो जगह जिस काम के लिये बनी है वहाँ ज़्यादा ज़ोर ध्यान और तवज्जो उसी काम की तरफ़ होना चाहिये और अवाम को इतनी ज़्यादा देर नही रोकना चाहिये कि वह परेशान हो जायें या लोगों को दोबारा वुज़ू क़रने की ज़रूरत पड़ने लगे ईद की नमाज़ के बाद इमाम के लिये खुत्बा देना और नमाज़ियों को इसका सुनना सुन्नत है लेकिन ज़्यादा लम्बा खुत्बा न पढ़ा जाये खुत्बे के बाद मुख़्तसर दुआ मांगना भी जायज़ व मुस्तहब है ईद की नमाज़ के बाद मुसलमान आपस में मुसाफे व मुआनके करते हैं एक दूसरे से गले मिलते हैं यह भी जायज़ है। जो लोग इसे नाजाइज़ बिदअ़त कहते हैं वह गलती पर हैं।

यह फैशन है या पागलपन

ईद के दिन खुदाये तआ़ला दे तो अच्छे उम्दा साफ़ सुथरे या नये कपड़े पहनना मुस्ताहब है लेकिन मौजूदा दौर के फैशनेबिल कपड़ों से बचना ज़रूरी है अफ़सोस की बात है कि ईद एक खालिस इस्लामी त्यौहार है लेकिन इसके लिये भी आज के नौजवान लड़के लड़कियाँ ऐसे फ़ैशनेबिल कपड़े बनाते हैं कि जिनसे बेहयाई और बेशर्मी का इज़हार होता है पता नहीं इस मुसलमान को क्या हो गया है कि यह अब मज़हब को भी अपने दुनियवी शौक पूरे करने के लिये इस्तेमाल कर रहा है।

और आज का फैशन पागलपन से ज़्यादा नहीं। अजीब अजीब तरह के कपड़े पहने जाते हैं न जाने कैसी कैसी पैन्टें शर्टें और

बनियानें चल पड़ी हैं पैन्टों का तो यह हाल है कि कोई हिसाब समझ में नहीं आता कहीं ढीली कहीं टाइट इनमें बेतुकी अजीब अजीब तरह की जेबें कभी कहीं और कभी कहीं लगाई जाती हैं नीची इतनी कि सड़क पर खूब झाड़ू लग रही है कहीं पेवन्द से लटक रहे हैं बाज़ पैन्टों को देखकर लगता है कि वह फट गई है जगह जगह टुकड़े निवाले और पेवन्द लगाकर जुगाड़बाज़ी कर ली गई है मगर फैशन के नाम पर सब हज़म है कितना ही बुरा बेढंगा कपड़ा है लेकिन अगर फैशन मे आ गया तो सब सही है।

मैंने देखा है कि दुनियादार यहाँ तक कि ग़ैर मुस्लिमों में भी जो ज़िम्मेदार क़िस्म के लोग होते हैं आला अफ़सरान या पूँजीपति लोग पैन्टें शर्टें भी पहनते हैं लेकिन वह ज़रा ढंग की होती हैं बेतुकी नीची न बेढंगी न बहुत टाइट न फुन्दने लटकती न घुटनों में जेबों वाली इससे ज़ाहिर हुआ कि फैशन एक हल्कापन है और अपने ग़ैर ज़िम्मेदार होने का इज़हार और ज़्यादा फ़ैशन में रंगे हुये स्मार्ट लड़कियाँ और लड़के अपनी वैल्यू गिराते हैं और लोगों की नज़र में हलके होते हैं यह पागलपन नहीं तो और क्या है। कि दीन के भी ख़िलाफ़ और दुनिया में भी कोई वैल्यू नहीं लुच्चे, लफंगे, हल्के और ग़ैरज़िम्मेदार कहलाये जा रहे हैं।

और लड़कियों औरतों में जो फैशन चल रहा है उसका मतलब तो सिर्फ यह है कि जो जितनी ज़्यादा नंगी कम से कम कपड़े में सबके सामने आ ज़ाये वह ज़्यादा स्मार्ट और फ़ैशनेबिल है।

हुकूमत के ज़िम्मेदार लोग भी बेवकूफी का शिकार हैं गुन्डागर्दी छेड़खानी रोकने के लिये अभियान चला रहे हैं लेकिन फैशनेबिल लड़कियों को अपने जिस्मों की नुमाइश करते हुये सड़कों बाज़ारों में घूमने फिरने पर कोई पाबन्दी नहीं लगा रहे हैं यह गुन्डागर्दी और औरतों से छेड़खानी कभी नहीं रोक पायेगें इन्हें चाहिये कि यह कानून भी बनायें कि कोई लड़की घर से बेसख्त ज़रूरत न

निकले और निकले तो ज़रा संभल कर और फ़ैशन में रंगी हुई और अपने जिस्म की नुमाइश करती हुई न निकले।

मैं पूछता हूँ आखिर नंगे जिस्म लेकर घरों से निकलने और घूमने का मतलब क्या है यही न कि दुनिया के सब लोग हमें देखें और हमारे जिस्म का कोई हिस्सा किसी से छिपान रह जाये तो आप जब खुद ही दावते नज़ारा दे रही हैं तो सिर्फ़ मनचलों के ख़िलाफ़ कानून साज़ी से क्या होगा यह अजीब बात है कि पेट्रोल के टैंक में चिराग़ और मोमबत्तियाँ जलाई जायें और फ़िर आग लगने से रोकने के लियें कानून बनाये जायें।

ईद के दिन शैतानी तोहफ़े

रमज़ान का महीना ख़त्म होने को है ईद करीब आ रही है शहर में एलान हो रहा है दीवारों पर पोस्टर चिपकायें जा रहे हैं ईद के दिन का ख़ास तोहफ़ा, फलानी स्पेशल पिक्चर फलां हाल में लग रही है बुकिंग जारी है जल्दी कीजिये और हज़ारों मुसलमान लड़के लड़कियां नमाज़ होते ही थियेटर और सिनेमा हालों में घुस गये या घरों में टी.बी. खोलकर बैठ गये यह ईद मनाई जा रही है। लगता है कि जैसे अल्लाह तआला को धोखा देने की कोशिश की जा रही है लेकिन यह अल्लाह तआला को धोखा क्या देंगे यह खुद ही बड़े धोखे में है और शैतान का कहना मानने वाले कभी फायदे में नहीं रहते यह खुदाई दीन के साथ खिलवाड़ करने वाले यह इस्लामी त्योहारों की आड़ में फिल्में देखने और दिखाने वाले खुदाई पकड़ से निकल नहीं सकेंगे और मौत से पंजा छुड़ाकर भाग नहीं पायेंगे। अब जो कर सको वह कर लो खूब अच्छी तरह जान लो अल्लाह तआला को रूलाते देर नहीं लगती पलक झपकने में कुछ का कुछ हो जाता है ज़रा सी देर में आँखों के सामने अन्धेरे छा जाते हैं जहाँ कहकहे

और ठठ्ठे लग रहे थे वहाँ चींखे निकल जाती हैं और अल्लाह जो चाहे वह कर सकता है उसकी पकड़ सख्त है।

अलविदा का बयान

जुमअतुल-वदाअ रमज़ान शरीफ़ के आख़िरी जुमअ को कहने लगे हैं। यह कोई इस्लामी त्योहार नहीं है। रमज़ान के जुमओं की तरह यह भी सिर्फ़ एक जुमअ है। कुरआन व हदीस में इसकी अलग से कोई ख़ुसूसियत या फ़ज़ीलत नहीं आई है। चूंकि यह रमज़ान शरीफ़ का आख़िरी जुमअ है। अलविदा के माना रूख़्सती के हैं। यानि अब रमज़ान का महीना रूख़्सत होने वाला है, इसलिए इसको जुमअतुल-वदाअ कहने लगे। आज के हालात को सामने रखते हुए यह बेहतर है कि इस दिन कोई ऐसा काम या ऐसी कोई बात न की जाए जिससे लोग इस जुमअे की अलग से कोई ख़ुसूसियत समझें। आला हज़रत इमाम अहमद रज़ा ख़ाँ रहमतुल्लाह अलैह ने भी "फ़तावा रिज़विय्या जदीद," जिल्द 8, पेज 455 पर यही लिखा है। अलविदा न कहकर इसको सिर्फ़ जुमअ का नाम ही दिया जाए तो ज़्यादा अच्छा है। और इसके ख़ुतबे में वही पढ़ना फ़र्ज़, वाजिब या सुन्नत है जो दूसरे जुमओं के ख़ुतबों में है। किसी साल ऐसा होता है कि रमज़ान के ख़ुतबों में है। किसी साल ऐसा होता है कि रमज़ान की 30 तारीख़ जुमअ के दिन पड़ रही हो तो काफ़ी लोग यह पूछते हैं कि अलविदा कौन-सा जुमअ होगा? क्योंकि अगर चांद 29 को हो गया तो रमज़ान से आगे हो जाएगा। इस तरह का सवाल पूछने वाले सब अनपढ़ और बे-इल्म लोग होते हैं। मैं कहता हूँ कि जब इस जुमअ की कोई ख़ुसूसियत इस्लाम में है ही नहीं तो इसके बारे में पूछने की क्या ज़रूरत है?

एक हक़ीक़त

नियाज़ व फातेहा, उर्स व मीलाद, तीजे दसवें, बीसवें, चालीसवें,छ:माही और बरसी करना, ग्यारहवीं और बारहवें शरीफ वग़ैरह मनाना और जुलूस निकालना अज़ान वग़ैरह में हुज़ूर का नाम सुन कर अँगूठा चूमना, दफ़्न के बाद क़बर पर अज़ान पढ़ना, मस्जिद में अज़ान के बाद सलात् पढ़ना, हर नमाज़ के बाद मदीने शरीफ की तरफ मुँह करके खड़े होकर हाथ बाँध कर आहिस्ता आहिस्ता सलात् पढ़ना, दरगाहों ,मज़ारों पर हाज़िरी देना, मज़हबे इस्लाम में अहले सुन्नत व अलजमाअ्त के नज़दीक यह सब कारे ख़ैर हैं। अक़ीदत व मुहब्बत वाले जाइज़ मुस्तहब और अच्छे काम हैं लेकिन शरअन फर्ज़ वाजिब नहीं। कोई न भी करे तो गुनहगार नहीं। हाँ जो इन्हें बुरा कहे इन से रोके, मना करे इन्हे नाजाइज़ कहे वह यक़ीनन बड़ा गुनहगार बल्कि गुमराह है, बुज़ुर्गों के ज़िक्र से चिढ़ने वाला है।

ISLAMI KUTUB KHANA

POST DHAUNRA, DIST. BAREILLY (U.P.)
PIN : 243204 - MOBILE : 9319295813

Rs. 20/=